ISSN : 2395-4132

THE EXPRESSION

An International Multidisciplinary e-Journal

Bimonthly Refereed & Indexed Open Access e-Journal

Impact Factor 6.4

Vol. 10 Issue 1 February 2024

Editor-in-Chief : Dr. Bijender Singh

Email : editor@expressionjournal.com

www.expressionjournal.com

The Expression: An International Multidisciplinary e-Journal
(A Peer Reviewed and Indexed Journal with Impact Factor 6.4)
www.expressionjournal.com ISSN: 2395-4132

18वीं शताब्दी में जाट प्रतिरोध का एक अध्ययन

राजेश
पीएच०डी० शोधार्थी
इतिहास विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर
रोहतक (हरियाणा)
Email- rajeshpawaria@gmail.com Mob. 7988892519

शोध सारांशः

किसी भी समाज या जाति के अभ्युदय में उसके द्वारा किए गए संघर्ष का स्थान सदैव अभिलक्षित होता है। चार्ल्स डार्विन के उत्तरजीविता के सिद्धांत के अनुसार प्रत्येक जीव को अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्ष करना पड़ता है। भारत की हरी–भरी, संपदा संपन्न, पुण्य भूमि सदैव विदेशियों हेतु आकर्षण का केंद्र रही है। अनेक आक्रमणकारियों ने भारत पर हमले किए, लूटपाट की एवं उनमें से कई यहीं बस गए परंतु भारतवासी सदैव अपनी मातृभूमि के रक्षा के लिए संघर्षरत रहे। 18वीं शताब्दी में एक ऐसा ही संघर्ष अपनी आत्मरक्षा, स्वाभिमान, धर्म, संस्कृति, आत्मरक्षा, बौद्धिक विकास तथा अस्तित्व की सुरक्षा के लिए जाटों द्वारा भारत की इस पुण्य भूमि पर किया गया। यह शोध पत्र भारत में 18वीं शताब्दी के दौरान जाटों द्वारा मुगलों के विरुद्ध किए गए प्रतिरोध की समीक्षा करता है। जाट, जो मुख्य रूप से तत्कालीन समय के दौरान एक कृषक समुदाय के रूप में कार्यरत थे, जिन्हें इस अवधि के दौरान विभिन्न चुनौतियों का सामना करना पड़ा। इन चुनौतियों में दमनकारी कराधान नीतियां, संकीर्ण धार्मिक नीतियाँ, सामाजिक भेदभाव और सत्तारूढ़ शक्तियों द्वारा उनकी स्वायत्तता को कम करने के प्रयास शामिल थे। यह शोध पत्र उस समय के सामाजिक–राजनीतिक परिदृश्य पर प्रकाश डालता है और उन कारकों का विश्लेषण करता है जिनकी वजह से जाट प्रतिरोध शुरू हुआ। यह शोध पत्र इन आंदोलनों का नेतृत्व करने में प्रमुख नेताओं की भूमिका की भी पड़ताल करता है। इसके अतिरिक्त, यह शोध पत्र जाटों द्वारा खुद पर पड़ने वाले बाहरी दबावों का विरोध करने के लिए गुरिल्ला युद्ध रणनीति और अन्य समुदायों के साथ गठबंधन सहित जाटों द्वारा अपनाई गई रणनीतियों की जांच करता है। ऐतिहासिक दस्तावेजों, संस्मरणों और विद्वतापूर्ण कार्यों की जांच के माध्यम से, इस शोध पत्र का उद्देश्य 18वीं सदी के भारत के राजनीतिक परिदृश्य को आकार देने में जाट प्रतिरोध के महत्व पर प्रकाश डालना है।

प्रमुख शब्दः

जाट, लोकतांत्रिक, संघर्ष, विद्रोह, संकीर्ण, प्रतिरोध।

The Expression: An International Multidisciplinary e-Journal
(A Peer Reviewed and Indexed Journal with Impact Factor 6.4)
www.expressionjournal.com ISSN: 2395-4132

18वीं शताब्दी में जाट प्रतिरोध का एक अध्ययन

राजेश
पीएच०डी० शोधार्थी
इतिहास विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थल बोहर
रोहतक (हरियाणा)
Email- rajeshpawaria@gmail.com Mob. 7988892519

पृष्ठभूमिः 18वीं सदी भारतीय इतिहास में उथल–पुथल भरी अवधि थी, जिसमें विभिन्न क्षेत्रीय शक्तियों का उदय और मुगल साम्राज्य का पतन हुआ। इस युग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले समुदायों में में से एक प्रमुख थे- जाट, जो मुख्य रूप से वर्तमान हरियाणा, राजस्थान और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के क्षेत्रों में केंद्रित थे। औरंगजेब के शासनकाल के दौरान कुछ ऐसी धार्मिक, संकीर्ण, अनुचित एवं द्वेष पूर्ण नीतियां जारी की गई जिसके कारण जाटों ने संगठित होकर मुगलों के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। सौभाग्य से इन्हें एक के बाद एक योग्य नेतृत्व मिलता रहा। यद्यपि मुगल काल में जनता राजा की देवीय शक्तियों में विश्वास करती थी परंतु औरंगजेब द्वारा की गई संकीर्ण नीतियों का असर आमजन पर ऐसा पड़ा कि उन्होंने यह मान लिया कि हिंदुस्तान के निष्पक्ष समझे जाने वाले बादशाह के राजगद्दी पर अब एक ऐसा व्यक्ति बैठा है जो इस्लाम का प्रचारक ज्यादा है, भारतीयों का बादशाह कम। औरंगजेब मुगल साम्राज्य का सबसे लंबे समय तक शासन करने वाला एवं सबसे अधिक शक्तिशाली शासक था जिसने अपने साम्राज्य का स्वरूप भले ही दिखने में तो कमोबेश पहले जैसा रखा परंतु व्यवहार में उसे अति केंद्रीयकृत कर दिया। औरंगजेब के विरुद्ध जिस आबादी का सर्वप्रथम टकराव हुआ वह थी मुगलों की राजधानी दिल्ली और आगरा के बीच बसी जाटों की आबादी। सर्वप्रथम हरियाणा के फरीदाबाद जिले के एक जाट युवा गोकुल ने इस संघर्ष की शुरुआत की। जाट मुख्यतः किसान थे परंतु अपने जन्मजात स्वभाव के कारण उनमें न्याय व संघर्ष की भावना बलवती थी। भौगोलिक दृष्टि से दुर्गम क्षेत्र का लाभ उठाकर जाटों ने न केवल मुगलों को चुनौती दे डाली अपितु अपना राज्य स्थापित करने में भी सफल हुए। मुगलों के लिए जाटों के अधीन आने वाला क्षेत्र बहुत महत्व रखता था क्योंकि दक्कन में पश्चिमी बंदरगाहों को जाने वाली सड़कें व राजधानी पहुंचने के सभी रास्ते इनके ही क्षेत्रों से होकर गुजरते थे।

प्रतिरोध के कारणः औरंगजेब की संकीर्ण धार्मिक नीति, जजिया कर दोबारा चालू करना, तीर्थ यात्रा कर लगाना, मंदिरों का विध्वंस किया जाना, हिंदू त्योहारों व मेलों पर पाबंदी लगाना, किसानों पर अत्याचार, उसका अविश्वासपूर्ण व अनुदार व्यक्तित्व, अतिकेंद्रीकृत व्यवस्था आदि के कारण उसके विरुद्ध विद्रोह की भावना भड़की। संक्षेप में निष्ठुर कत्ले आम को छोड़कर हिंदू प्रजाजनों के धर्म को परिवर्तित करवाने के लिए सभी उपाय औरंगजेब द्वारा प्रयोग में लाये गए। औरंगजेब के अधीन मुगल शासन का परिवर्तित स्वरूप व कार्य क्षेत्र जाट बिरादरी की लोकतांत्रिक जनजातीय और स्वाभाविक जीवन पद्धति के प्रति हानिकारक था। जाट स्वभाव से स्वतंत्रताप्रेमी एवं प्रजातांत्रिक हैं। पारंपरिक रूप से कृषि प्रधान जाटों ने बदलते राजनीतिक और सामाजिक

परिदृश्य के कारण खुद को हाशिए पर महसूस किया एवं उत्पीड़ित पाया। जाट अत्याचार सहन नहीं कर सकता। अतः उन्होंने अपने विरुद्ध हो रहे शोषण व अत्याचार के विरोध में संघर्ष का रास्ता चुना।

घटनाएँ : राजनीतिक उत्तेजना, आर्थिक असंतोष, धार्मिक उत्पीड़न एवं गणतांत्रिक मूल्यों पर आधारित जाटों की वीर भावना के कारण 1669 में तिलपत के जमींदार गोकुला ने मुगलों की नीतियों के विरुद्ध संघर्ष छेड़ दिया। गोकुला ने मथुरा से 6 मील दूर सिहोरा नामक स्थान पर मथुरा के मुगल फौजदार द्वारा जाटों पर किए गए हमले का निर्भीकता से सामना किया तथा इस संघर्ष में 12 मई 1669 को मथुरा का मुगल फौजदार अब्दुल नबी मारा गया। गोकुल व उसके बाद उसके जीवित बचे साथियों को बंदी बना लिया गया। आगरा की मुगल कोतवाली के आगे जिसे आजकल किनारी बाजार के नाम से जाना जाता है एक–एक अंग काट कर निर्ममतापूर्वक गोकुल की हत्या कर दी गई। हिंदू व मुसलमानों का विशाल जन समूह इस करुण दृश्य को देख रहा था। उनके हृदय में करुणा, नेत्रों में आंसू थे और धर्म की पावन वेदी पर बलिदान होने वाले वीरों के दिल में उमंग, प्रसन्नता व संतोष के भाव भरे हुए थे जो उस समय स्पष्ट रूप से झलक रहे थे। गोकुला के एक–एक अंग के अलग–अलग टुकड़े कर उसके सर को मुगल कोतवाली के दरवाजे पर लटका दिया गया ताकि चारों तरफ आतंक फैल जाए। यह घटना जनवरी 1670 में घटी। बंदी बनाए गए 7000 जाटों से निमर्मतापूर्वक व्यवहार किया गया। गोकुला के परिवार को बलात मुसलमान बना लिया गया। मथुरा का नाम बदलकर 'इस्लामाबाद' वह वृंदावन का नाम 'मोमीनाबाद' रख दिया गया। प्रोफेसर कानूनगो गोकुला की शहादत के संदर्भ में लिखते हैं कि "गोकुला का खून व्यर्थ नहीं गया। उसने जाटों के हृदय में स्वतंत्रता के नव अंकुरित पौधे को अपने खून से सींचा।" गोकुल के बाद बृजराज व भज्जा सिंह ने जाटों की भावना को अपना नेतृत्व देना चाहा परंतु इसमें सफलता मिली भज्जा सिंह के पुत्र राजा राम को, जिसने जाटों को एकजुट करने, अनुशासित करने, सैनिक टुकड़ियों में संगठित करने व अपने कप्तानों के आदेशों का पालन करना सिखाया। राजा राम ने अपने दुर्ग दूर घने जंगलों में बनाए तथा उन्हें मिट्टी के मजबूत परकोटों से घेर कर दुर्गों को सुरक्षित बनाया। जिससे वह गोकुल के समय से अधिक मजबूत हो गए और राजाराम ने सरदार रामकी चाहर उर्फ रामचेहरा से मित्रता स्थापित कर अपनी शक्ति बढ़ाई। राजाराम ने कुछ ही समय में आगरा में मुगलों की सत्ता को समाप्त कर सड़कों पर यातायात को बंद कर दिया। एक घटना में तो आगरा का मुगल सूबेदार सफी खान एक प्रकार से दुर्ग में ही गिर गया था। एक अन्य स्थानीय फौजदार अमीर अबुल फजल को भी एक कठिन संघर्ष राजाराम से करना पड़ा अन्यथा उसी समय राजाराम अकबर का मकबरा लूट लेता जो उसने बाद में लूटा। औरंगजेब ने जाटों को दंडित करने हेतु खाने जहां बहादुर कोकलताश को नियुक्त किया परंतु उसे भी इसमें कोई सफलता नहीं मिली। अतः औरंगजेब ने शहजादे मोहम्मद आजम को जाटों पर कार्रवाई का आदेश दिया परंतु गोलकुंडा में बनी परिस्थितियों के कारण उसे बुरहानपुर से ही वापस गोलकुंडा बुला लिया एवं इसके बाद अपने पोते बीदर बख्त को जाटों के विरुद्ध नेतृत्व सोंपा एवं खाने जहां को उसका सहायक बनाया गया। औरंगजेब का ऐसा प्रयास यह दर्शाता है की जाटों के प्रतिरोध को दबाने के लिए उसे कितने मजबूत प्रयास करने पड़े। राजा राम ने मुगल सेनापति अगर खान पर भी हमला करके 80 मुगल सैनिक मार डाले। राजाराम ने महावत खान(मीर इब्राहिम) पर भी हमला कर दिया जब वह पंजाब के गवर्नर के तौर पर कार्यभार ग्रहण करने हेतु जा रहा था। इस संघर्ष में मुगलों के 400 सैनिक भी मार डाले। राजाराम ने 1688 में अकबर के मकबरे को नष्ट भ्रष्ट कर डाला तथा वहां से सोने चांदी के बर्तन और कालीन आदि सामान लूट लिए। इतिहासकार गिरीश चंद्र द्विवेदी मनुची का उदाहरण देकर जाटों द्वारा अकबर की हड्डियां निकालकर उन्हें आग में भस्म करने की बात का भी उल्लेख अपनी पुस्तक में करते हैं। मंडावर तहसील के बीजल नामक गांव में उनके बीच में युद्ध हुआ जिसमें एक मुगल बंदूकधारी ने वृक्ष के पीछे से छिपकर 4 जुलाई 1688 को राजाराम को गोली मार दी। इस युद्ध में राजाराम के साथी राम चेहरा को जीवित पकड़ लिया गया तथा बाद में उसका सिर काटकर आगरा में सार्वजनिक रूप से प्रदर्शित किया गया। राजाराम की मृत्यु के बाद जाटों को पूरी तरह खत्म करने हेतु औरंगजेब ने जयपुर नरेश बिशन सिंह को माध्यम बनाया। बिशन सिंह ने जाटों के भरतपुर, नदबई, कुम्हेर, डीग आदि की गढियों पर अधिकार कर लिया तथा उन राजपूत एवं अन्य जातियों को भी दंडित करने का कार्य करने का निश्चय किया जो उस समय जाटों का सहयोग कर रही थी। राजाराम के पश्चात जाटों का नेतृत्व चूड़ामन ने संभाला। जाट प्रतिरोध के शुरुआती नेताओं में से एक, चूड़ामन ने स्थानीय जमींदारों

और मुगल अधिकारियों की दमनकारी नीतियों के खिलाफ अपने समुदाय को संगठित किया। उन्हें अक्सर जाट सक्रियता के अग्रदूतों में से एक माना जाता है।

अपनी योग्यता का प्रदर्शन करते हुए चूड़ामन ने मुगलों द्वारा शोषित निम्न जातियों को अपने प्रभाव क्षेत्र में शरण देकर बसाया। उन्हें सुरक्षा व रोजगार प्रदान किए। उन्हें उनकी मेहनत का उचित भुगतान किया। जाट किसानों को सैन्य प्रशिक्षण देकर शाही खजाने व मुगल काफिलों को लूटने का तरीका सिखाया। इसी आर्थिक मजबूती के सहारे एक शक्तिशाली संगठन स्थापित किया। वह निकालो मैक्यावली द्वारा कहे गए वाक्यांश "अंत साधन को उचित ठहराता है" में विश्वास रखने वाला व्यक्ति था अर्थात यदि कोई लक्ष्य नैतिक रूप से पर्याप्त महत्वपूर्ण है तो उसे प्राप्त करने का कोई भी तरीका स्वीकार्य है। उसमें संगठन तथा विशेष अवसरों का चतुराई से प्रयोग करने की क्षमता थी। उसमें जाटों के अक्खड़पन के साथ मराठों की चतुराई और राजनीतिक बुद्धिमत्ता थी।

जहांदार शाह के समय मुगलों द्वारा लोगों को सुरक्षा प्रदान करने में असमर्थता के कारण दिल्ली से चंबल तक चूड़ामन जाटों व अन्य हिंदुओं का स्वाभाविक स्वामी बन गया। उसने चतुराईपूर्वक सैयद बंधुओं, राजपूत व मुगल बादशाह से भी आवश्यकता अनुसार अपने संबंध स्थापित किए। चूड़ामन ने जय सिंह के अभियानों का जबरदस्त सामना किया एवं मुगल शाही दरबार की राजनीति को भी प्रभावित किया। 1721 में चूड़ामन ने पारिवारिक कारणों से अपनी जीवन लीला समाप्त कर ली। इस संदरभ में ठाकुर देशराज कहते हैं कि "इसमें कोई मानता है की लड़ाई में मारे गए, कोई कहता है जहर खा लिया तो कोई कहता है कि हीरे की कणी खा ली।" चूड़ामण के बाद जाटों का नेतृत्व बदन सिंह ने संभाला। यह चूड़ामन का भतीजा था। बदन सिंह चूड़ामन से सर्वथा भिन्न स्वभाव का था। वह शांत व विनम्र स्वभाव का व्यक्ति था। बदन सिंह ने अपने जीवन का आरंभ आमेर (जयपुर) के सवाई जयसिंह के सामंत के रूप में किया था। जय सिंह ने उसे वह सब भूमि व उपाधियां प्रदान की जो चूड़ामन को मोहम्मद शाह के शासनकाल में प्राप्त हुई थी। बदन सिंह का मानना था कि पड़ोसियों से मित्रता, शाही अमीरों से अच्छे संबंध, व्यवस्थित क्रांति एवं अधिकृत प्रदेशों की सुदृढ़ व्यवस्था ही राज्य निर्माण कर सकती है। बदन सिंह ने ही एक संगठित जाट साम्राज्य का निर्माण किया एवं थून की जगह डीग को अपनी राजधानी बनाया। उन्होंने डीग व भरतपुर में अजेय किलों के निर्माण और उनमें सुंदर महलों की रचना का शौक था। बदन सिंह ने अपनी सेना में अनेक मुसलमानों को भर्ती किया। उसने दरबारी शिष्टाचार, वांछित परिष्कार एवं गरिमा लाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया तथा खेतिहर समुदाय के समक्ष एक शिष्टाचारी एवं दरबारी शासन का स्वरूप प्रस्तुत किया। बदन सिंह ने कई दुर्ग, मकान, महल, जलाशय एवं मंदिरों का निर्माण कराया। उसने जाट संगठन को एक स्थाई जाट राज्य में तब्दील कर दिया जिसे भरतपुर के नाम से जाना गया। बदन सिंह के पश्चात जाट नेतृत्व सूरजमल ने संभाला। कानूनगो ने उसके बारे में लिखा है कि "षडयंत्रों एवं अनैतिक कूटनीति के युग में उसने पाखंडी मुगल और चालक मराठा दोनों को चक्कर में डाल दिया था। संक्षेप में वह एक चौक्कनी चिड़िया के समान था जिसने अपने को बिना फँसाये प्रत्येक जाल में से दाना चुगा।" उसके न्यायपूर्ण और बुद्धिमान शासन ने सभी धर्मों, वर्गों, व्यवसायों के लोगों को आकर्षित किया। उसे समय हिंदुस्तान के अव्यवस्थापूर्ण मैदान में जाट राज्य, भरतपुर एकमात्र ऐसा स्थान था जहां शांति और सुरक्षा पाई जाती थी। सूरजमल को जाट जाति का प्लेटो मानते हैं। बुद्धि, चतुराई, राजस्व, नागरिक मामलों व जन कल्याण में उसकी तुलना केवल कुछ गिने–चुने व्यक्तियों से ही की जा सकती है। उसने आमेर की गद्दी पर ईश्वरी सिंह के दावे के लिए अपना वचन निभाने हेतु मराठों को टक्कर दी। अपने पुत्र जवाहर सिंह को मुगल अमीर उल उमरा के पास भेज एक संधि की। जिसके अनुसार मुगल पीपल के वृक्ष नहीं काटेंगे तथा किसी मंदिर का अपमान या नुकसान नहीं करेंगे। सूरजमल ने ही भरतपुर के दुर्ग का निर्माण कराया जिसे आगे चलकर 'लोहागढ़' के नाम से जाना गया।

जाटों द्वारा अपनाई गयी प्रतिरोध की रणनीतियाँ:

गुरिल्ला युद्धः अक्सर संख्यात्मक रूप से बेहतर ताकतों का सामना करने वाले जाटों ने बड़े प्रभावी ढंग से गुरिल्ला युद्ध रणनीति अपनाई। इलाके के बारे में उनका ज्ञान और तेजी से हमला करने और पीछे हटने की क्षमता ने उन्हें एक दुर्जेय शक्ति बना दिया। गुरिल्ला युद्ध प्रणाली एक ऐसी युद्ध तकनीक है जिसमें कम संख्या में योद्धा किसी विशाल सेना के विरुद्ध छोटी–छोटी टुकड़ियों में अत्यंत तेजी से भीषण हमला करते हैं। इसमें घात लगाना, छापा मारना, शत्रु का जितना हो सके नुकसान पहुँचा कर भाग जाना आदि शामिल होता है। अक्सर इस प्रकार की युद्ध तकनीक का प्रयोग किसी बड़ी सेना या शासक के विरुद्ध किसी कम संसाधनों वाली

परंतु तेज तरार्र टुकड़ी द्वारा किया जाता है। जाटों के द्वारा अपनाई गयी गुरिल्ला युद्ध की अनेक विशेषतायें थी जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं:– जाटों द्वारा अपनाई गयी गुरिल्ला युद्ध तकनीक में तत्परता, अनुशासन और दृढ़ निष्ठा की अहम भूमिका थी। उन्होंने अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए एकता और नियमबद्ध रूप से कार्य किया । उनके गुरिल्ला युद्ध में कुशल संगठन का बहुत महत्व था। लोगों को साथ लेकर चलना और उन्हें युद्ध में भाग लेने की प्रेरणा देना इसका एक मुख्य पहलू रहा है। गुरिल्ला युद्ध में जंगल का बहुत महत्व है। जंगल की गुफाओं, घने झाड़ियों और छिपे हुए स्थलों का उपयोग युद्ध स्थल के रूप में किया जाता है। जाटों के गुरिल्ला युद्ध में प्रत्येक सैनिक में अद्भुत समन्वय होता है। यानी उनकी सेना बड़ी सेना के मुकाबले में संख्या में भले ही कम होती हो, लेकिन वे अपने नेता के प्रति समर्पण, स्फूर्ति, तेजी, द्रड़ इच्छाशक्ति, आत्मीयता, कुशल रणनीति आदि का सही उपयोग करके मजबूत से मजबूत सेनाओं के विरुद्ध भी लड़ने को तैयार रहते थे। जाटों के गुरिल्ला युद्ध में किसी बड़ी सेना के सामने शक्तिशाली हथियारों के बजाय, आसानी से मिल जाने वाले हथियारों का उपयोग किया जाता था जो आमतौर पर खेती में या घरेलू कामों में आने वाले औजार होते थे । यह युद्ध समय, स्थिति और सामाजिक परिस्थितयों के अनुरूप होता है। गुरिल्ला युद्ध में गुप्तचर और छल का भी बड़ा महत्व होता है। इस युद्ध तकनीक में अपने आप को शासक या सेना से छिपाकर और उनके संचालन को बिगाडने के लिए गुप्तचर और अन्य कूटनीतिक तरीकों का भी उपयोग किया गया। जिसके कारण वे अपनी छोटी सैन्य शक्ति के बावजूद शाही सेनाओं को भी टक्कर देने का साहस रखते थे। ये युद्ध प्रथा इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमे बड़े–बड़े शासकों व सेनाओं के विरुद्ध लड़ने के लिए कम शक्तिशाली एवं कम संसाधन युक्त संगठन भी अपने साहस के बल पर किसी भी सेना को मात देने में सक्षम हो पाते बशर्ते उनमें युद्ध में मर मिटने का जज्बा हो, जाटों ने इसी कारण इस युद्ध पद्धति को अपने संघर्ष हेतु चुना।

गठबंधन: जाटों ने सहयोगियों की आवश्यकता को पहचानते हुए, अपने आम दुश्मनों के खिलाफ मराठों और राजपूतों जैसी अन्य शक्तियों के साथ गठबंधन बनाया। ये गठबंधन अक्सर प्रमुख लड़ाइयों में निर्णायक साबित होते हैं। 18वीं शताब्दी में, जाट, मराठा और राजपूत भारत में तीन प्रमुख समुदाय थे, प्रत्येक का अलग इतिहास, संस्कृति और राजनीतिक संदर्भ थे। जाट मुख्य रूप से कृषक और पशुपालक थे, जो अपनी बहादुरी और मार्शल परंपराओं के लिए जाने जाते थे। वे हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और राजस्थान जैसे क्षेत्रों में केंद्रित थे। 18वीं शताब्दी के दौरान, जाटों ने उत्तर भारत की राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वे अक्सर मुगल साम्राज्य के साथ संघर्ष करते रहे, विशेषकर मुगल शासन के पतन के दौरान। इस दौरान जाटों ने ना सिर्फ मुगलों व अन्य शक्तियों के विरुद्ध संघर्ष किया अपितु अपने राज्य भी स्थापित किये और पतनशील मुगल साम्राज्य की सत्ता को भी चुनौती दी। इस दौरान जाटों ने मुगलों के खिलाफ मराठों के साथ सहयोग किया, खासकर औरंगजेब के शासनकाल के बाद के वर्षों और उसके बाद मुगल पतन के दौरान। क्योंकि 18वीं शताब्दी तक मराठे भारत की एक प्रमुख शक्ति बन गए थे। उन्होंने पूरे मध्य और पश्चिमी भारत में अपना प्रभाव फैला लिया था। इस अवधि के दौरान मराठा कई संघर्षों में शामिल थे, जिनमें क्षेत्रों पर नियंत्रण के लिए मुगल साम्राज्य के खिलाफ लड़ाई भी शामिल थी। मराठों और मुगलों के बीच संबंध अक्सर सहयोग और संघर्ष दोनों प्रकार का था, उनमें गठबंधन के साथ–साथ प्रतिद्वंद्विता के लक्षण भी थे। संक्षेप में, 18वीं शताब्दी के दौरान जाटों, मराठों और राजपूतों के बीच संबंध जटिल और विविध थे। उनमें गठबंधन, संघर्ष और राजनीतिक गतिशीलता में बदलाव शामिल था क्योंकि इन समुदायों ने महत्वपूर्ण राजनीतिक उथल–पुथल और मुगल साम्राज्य के पतन के दौरान भारत के बदलते परिदृश्य को प्रभावित किया था

शोध निष्कर्ष: 18 में शताब्दी में औरंगजेब की मृत्यु के साथ ही मुगल साम्राज्य का विघटन होना शुरू हो गया। जाटों ने धीरे–धीरे अपनी सैनिक शक्ति को राजनीतिक रूप देना आरंभ कर दिया था यद्यपि शुरुआत में उन्होंने अपने संघर्ष को मुगल शासको की अत्याचार पूर्ण व अन्यायी नीतियों के विरुद्ध शुरू किया था परंतु धीरे–धीरे गोकुल, राजाराम, चूड़ामण, बदन सिंह, सूरजमल व जवाहर सिंह के नेतृत्व में वे स्वयं अपना शासन स्थापित करने में सफल हुए। उन्होंने अपने वीरता पूर्ण कारनामों से किसानों व अपने अधीन सैनिकों में नया जोश भरा तथा उस सुरक्षित व अराजक वातावरण में आमजन हेतु एक सुरक्षित माहौल तैयार करने में भी सफल हुए।

18वीं शताब्दी में जाट प्रतिरोध की घटना जाटों द्वारा मुगलों के विरुद्ध की जाने वाली चुनौतीपूर्ण सामाजिक–राजनीतिक परिस्थितियों की प्रतिक्रिया थी। मुगल साम्राज्य के कमजोर होने और उसके बाद क्षेत्रीय शक्तियों के उदय ने एक शक्ति शून्यता पैदा कर दी, जिसमें स्थानीय समुदायों को अक्सर खुद की रक्षा करनी

पड़ी। बढ़ते कराधान और स्वायत्तता की हानि का सामना कर रहे जाटों ने इन बाहरी दबावों का विरोध करने के लिए खुद को संगठित करना शुरू कर दिया। 18वीं शताब्दी में जाटों द्वारा किये गये प्रतिरोध के दूरगामी प्रभाव थे। इसने न केवल जाट समुदायों के लिए कुछ हद तक स्वायत्तता सुनिश्चित की, बल्कि दमनकारी शासन के खिलाफ प्रतिरोध की व्यापक कहानी में भी योगदान दिया। चूड़ामन और सूरजमल जैसे नेताओं की विरासत भारत में सामाजिक न्याय और समानता के लिए आंदोलनों को प्रेरित करती रहती है। चूड़ामन और सूरजमल जैसी शख्सियतों के नेतृत्व और गुरिल्ला युद्ध और गठबंधन जैसी रणनीतियों को लागू करने के माध्यम से, जाट बाहरी दबावों का विरोध करने और अपनी स्वायत्तता का दावा करने में सक्षम थे।

यहां यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि जब जाटों ने मुगलों के विरुद्ध विद्रोह किया उस समय ना तो मुगल साम्राज्य अशक्त था ना ही उसके शासक संसाधन हीन थे अपितु यह तो मुगलों के चरम उत्कर्ष का समय था। जब मुगलों की सत्ता कमजोर पड़ने लगी तो उस समय जाट शासको ने ही सामान्य जनता को सुरक्षा प्रदान करने का कार्य अपने कंधों पर धारण किया। 18 वीं शताब्दी में जाट प्रतिरोध तत्कालीन समय की एक अविस्मरणीय ऐतिहासिक घटना थी। यह शोध भारतीय इतिहास के अक्सर नजरअंदाज किए गए पहलू पर प्रकाश डालता है और विपरीत परिस्थितियों में हाशिए पर रहने वाले समुदायों के लचीलेपन को रेखांकित करता है।

संदर्भ सूची:

कानूनगो, कालिका रंजन, जाटों का इतिहास, (सं) वीर सिंह, दिल्ली, 2003
स्मिथ, विंसेंट, अर्ली हिस्ट्री ऑफ इंडिया, 1924
सरकार, यदुनाथ, फॉल ऑफ द मुगल एंपायर, भाग–2, 1934
शर्मा, उपेंद्रनाथ, जाटों का नवीन इतिहास, भाग–1, जयपुर, 1977
सिंह, ठाकुर देशराज, जाट इतिहास, तृतीय संकरण, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, 2006
आर्य, महिपाल, जाट इतिहास, सूर्य भारती प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2019
द्विवेदी, गिरीश चंद्र, जाट और मुगल साम्राज्य, संपादक वीर सिंह, ओरिजिनल प्रकाशन, दिल्ली, 2002
अली, अतहर, नोबिलिटी अंडर औरंगजेब, कलकत्ता, 1925
सिंह, नत्थन, जाट इतिहास, ग्वालियर, 2004
वर्मा, नरेंद्र सिंह, अमर ज्योति वीरवर गोकुल सिंह, दूसरा संस्करण, संकल्प प्रकाशन, आगरा
1947
गहलोत, दिलसुख, क्षत्रिय इतिहास के आईने में जाट, खंड– 1, राधा पब्लिकेशंस, नई दिल्ली, 2014
सिंह, ठाकुर गंगा, यदुवंश, प्रथम भाग, भरतपुर राजवंश का इतिहास, सिंह प्रकाशन, कोठी श्रीगंगा विहार अनाह गेट, भरतपुर
वर्मा रामवीर सिंह जाटों का गौरवशाली इतिहास, जयपुर, 2017
चंदावत, डॉ प्रकाश चंद्र, महाराजा सूरजमल और उनका युग (1745 –1763) प्रथम संस्करण, जयपाल एजेंसी, तहतोरा, आगरा
प्रधान, एम० सी०, पॉलीटिकल सिस्टम ऑफ जाटस ऑफ द नॉर्दन इंडिया, न्यू दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1966